Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 SHISRRJ | Volume 5 | Issue 3 | ISSN : 2581- 6306

# मीमांसादर्शन में प्रयुक्त लौकिक न्यायों का विवेचन

डॉ. अंशुल दुबे
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, तिलक महाविद्यालय, औरैया, उत्तर प्रदेश।

**Article Info**

Volume 5, Issue 3

Page Number : 101-105

**Publication Issue :**

May-June-2022

**Article History**

Accepted : 01 May 2022

Published : 30 May 2022

**शोधसारांश** – लौकिक न्याय व्याख्यान की वह प्रक्रिया है जिसमें वस्तुतः 'सागर को बूंद' में समाहित करने की अपूर्व शक्ति और सामर्थ्य है। लौकिक न्याय अत्यन्त प्राचीन है। वेद, उपनिषद्, व्याकरण, न्याय एवं मीमांसा ग्रन्थों से लेकर लौकिक संस्कृत साहित्य तक इसकी प्रभा छिटकी हुई है। मीमांसा दर्शन के गूढ़ विषयों को समझने के लिए आचार्यो ने स्व–स्व ग्रन्थों में बहुशः लौकिक न्यायों का अवलम्बन किया है। जहाँ तक अभिव्यक्ति का प्रश्न है, लौकिक न्यायों के प्रयोग से इसमें एक विशिष्ट प्रकार का आकर्षण आ जाता है तथा न्यायों में सन्दर्भित आधार के कारण अभिव्यक्ति अपनी प्राचीन परम्परा से जुड़ जाती है, उसमें भारतीय धरती की सोंध भर जाती है और शैली भी इनके प्रयोग से सूक्त्यात्मक एवं सघन हो जाती है। मीमांसा दर्शन के सिद्धान्तों के विशिष्ट व्याख्यान क्रम में अन्यान्य ग्रन्थों में आए प्रमुख लौकिक न्यायों का विवेचन करना हमारे शोध–पत्र का वर्ण्य विषय है।

**मुख्य शब्द**–लौकिक,, मन्दविष न्याय, शंखन्याय, तद्वचपदेश न्याय, ग्रहैकत्व न्याय, सूक्त्यात्मक।

लौकिक न्याय व्याख्यान की वह प्रक्रिया है जिसमें वस्तुतः 'सागर को बूंद' में समाहित करने की अपूर्व शक्ति और सामर्थ्य है। लौकिक न्याय अत्यन्त प्राचीन है। वेद, उपनिषद्, व्याकरण, न्याय एवं मीमांसा ग्रन्थों से लेकर लौकिक संस्कृत साहित्य तक इसकी प्रभा छिटकी हुई है। मीमांसा दर्शन के गूढ़ विषयों को समझने के लिए आचार्यो ने स्व–स्व ग्रन्थों में बहुशः लौकिक न्यायों का अवलम्बन किया है। जहाँ तक अभिव्यक्ति का प्रश्न है, लौकिक न्यायों के प्रयोग से इसमें एक विशिष्ट प्रकार का आकर्षण आ जाता है तथा न्यायों में सन्दर्भित आधार के कारण अभिव्यक्ति अपनी प्राचीन परम्परा से जुड़ जाती है, उसमें भारतीय धरती की सोंध भर जाती है और शैली भी इनके प्रयोग से सूक्त्यात्मक एवं सघन हो जाती है। लौकिक न्याय लोक के शाश्वत अनुभव प्रसूत निर्णयों के प्रत्यय एवं अधिकरण हैं।

मीमांसा दर्शन के सिद्धान्तों के विशिष्ट व्याख्यान क्रम में अन्यान्य ग्रन्थों में आए प्रमुख लौकिक न्यायों का विवेचन अग्रलिखित है–

**Copyright: ©** the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

**अकाले कृतमकृतं स्यात् न्याय –** असमय किया हुआ कार्य, कार्य न करने के समान है। यथा फसल सूखने पर वर्षा निरर्थक है।

**प्रयोग– (क) किं चतुर्धा करणादूर्ध्वमावाह्यते किंवा प्रयासेभ्यः पुरा। नाद्यः। अकाले कृतमकृतं स्यात् न्यायेनावाहनस्य निरर्थकत्वात्[1]।**

**(ख) तस्मादन्येषु कालेषु अविहितत्त्वकृतमप्यकृतं स्यात्[2]।**

**यस्य नास्ति पुत्रो न तस्य पुत्रस्य क्रीड़नकानि क्रियन्तं न्याय –** जिसे पुत्र नहीं है उसके पुत्र के लिए खिलौना बनाने का न्याय।

**प्रयोग– (क) जैमिनि सूत्र–'न चाङ्गविधिरनङ्गे स्यात् (10/03/05) की व्याख्या शबर स्वामी ने की – 'नह्यनङ्गे कर्मण्यङ्गस्य विशेषविधिःस्यात्। भवति च विशेष विधिः आश्वबालः प्रस्तर इति न ह्यसति प्रस्तरे प्रस्तर विशेषः शिष्येत् यथा यस्य नास्ति पुत्रो न तस्य पुत्रस्य क्रीड़नकानि क्रियन्ते[3]।।' (ख) पार्थसारथिमिश्र कृत न्यायरत्नमाला में –**

**'सर्वमिदमजातपुत्र क्रीड़नकमापद्यते[4]।।'**

**शंखवेला या शंखन्याय –** जैसे विशिष्ट समय में शंख की ध्वनि विशेष नियमित है, उसी प्रकार शंखध्वनि से वेला विशेष का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। चैत्र मास के बाद वैशाख मास और वैशाख मास के बाद ज्येष्ठ मास होता है। इस प्रकार क्रम विशेष के ज्ञान में यह न्याय होता है।

**प्रयोग– (क) न्यायमालाविस्तर में – ' उपलक्षणापायेऽप्युपलक्ष्यानपायस्य प्रतिदिनं शंखवेलायामागन्तव्यमित्यादौ प्रसिद्धत्वात्। न हि कालविशेषोपलक्षणयोपात्ते शंखध्वनौ क्वचिद्दिवसे दैवादकृ तेसति तदुपलक्षितः कालो नास्तीति नावगम्यते[5]।।'**

शेक्सपियर ने अपने नाटक रिचर्ड 3 (अंक 5 दृश्य 3) में काकशट टाइम का प्रयोग इसी अर्थ में किया है।

**शतपत्रभेदन्याय–** सौ पत्रों को एक सुई द्वारा बिद्ध करने से एक ही बार में बिद्ध हो गए, ऐसा जान पड़ता है किन्तु ऐसा है नहीं। प्रत्येक पत्र भिन्न भिन्न समय पर बिद्ध हुआ है पर काल की सूक्ष्मतावश उसका अनुमान नहीं होता है। इस प्रकार बहुत से कार्य एक–दूसरे के बाद होने पर एक समय में हुए हैं, जहाँ ऐसा जान पड़ता है वहाँ यह न्याय होता है।

**प्रयोग– 'यत्प्रदीप प्रभाद्युक्तं सूक्ष्मकालोऽस्ति तत्र नः।**

**दुर्लक्षस्तु तथा बेधः पद्मपत्रशते तथा[6]।।'**

**यावद्वचनं वाचनिकं न्याय–** अभिव्यक्त विचारों के ठीक संवहन का न्याय। अपने आशय को श्रोता तक ठीक से पहुँचा देने की क्षमता जहाँ हो वहाँ यह न्याय होता है, अर्थात हम जो कहना चाहते हैं, श्रोता उसे ठीक से वैसा ही समझे तो अवबोध के लिए उसे किसी अन्य साधन की आवश्यकता न पड़े।

प्रयोग– **'कश्चात्र विशेषः। स यदि वाचनिकस्ततोयावद्वचनमेव कर्त्तव्यः[7] ।'**

**मन्दविष न्याय–** धीरे धीरे विष देने का न्याय। 'स्लो प्वायजनिंग' के अर्थ में यह न्याय आता है। 'तीव्र विष न्याय' के विपरीतार्थक इस न्याय के प्रयोग स्थल प्राप्त होते हैं।

प्रयोग– 'इत्थं च संभवति प्रामाण्ये नाप्रामाण्यं युक्तमिति भवति केषांचिदाकांक्षा सापि मन्दविष न्यायेन निराकर्त्तवयेत्येवमर्थमिदमधिकरणम्[8]।'

**मण्डूकवसाक्ताक्षाणां वंशेषूरग भ्रमः न्याय–** जिनकी आँख मेंढक की चर्बी से मलिन हो उन्हें बाँस में सर्प का आभास हो जाता है।

प्रयोग– श्लोकवार्तिक से गृहीत न्याय 'तात्पर्यटीका' में प्रयुक्त है–

**'न च मण्डूकवसाक्ताक्षाणामिवानवगतास्मृतोरगाणापि प्रभमाक्षसन्निपाताद्वंशेषूरगारोप इति साम्प्रतम्[9]।'**

**प्रमाणवन्त्यदृष्टानि कल्प्यानि सुबहून्यपि न्यायः**–किसी कार्य से जो अन्ततः कुछ फल प्रदान करे, उत्पन्न अदृष्ट प्रभावों को चाहे वे कितने भी हों, मान लिया जा सकता है यदि उनकी विश्वसनीयता स्थापित हो।

प्रयोग– **'श्रुतिसिद्धयर्थमश्रुतोपलब्धौ यत्नवता भवितव्ये नतु श्रुतशैथिल्यमादरणीयमिति। तथा प्रमाणवन्त्यदृष्टानि कल्प्यानि सुबहून्यपीति न्यायात्[10]।'**

**तद्व्यपदेश न्याय –** किसी वस्तु से समानता उपदर्शित करने वाले नाम का नियम। **जैमिनि सूत्र 1/4/5** का शीर्षक है जहाँ–**'अथैषसंदंशेनाभिचरन्यजेत', 'अथैष 'श्येनेनाभिचरन्यजेत'** और **'अथैष गवाभिचरन्यजेत'** वाक्यों पर विचार किया गया है और निर्णय हुआ कि 'श्येन', 'संदंश' और 'गो' विभिन्न यज्ञों के लिए उपादान नहीं है बल्कि मात्र उनके नाम हैं।

प्रयोग– **'तद्व्यवदेशं च[11]।'**

**तदागमे हि तद्दृश्यत न्याय–**किसी अन्य वस्तु की उपस्थिति से किसी अन्य वस्तु की सदा उपस्थिति का भान होने का नियम अर्थात् उनके सहवर्ती होने का नियम।

प्रयोग– **'न केवलमेतावेवान्वयव्यतिरेकौ यौ परस्परपरित्यागेन लक्ष्यते तस्मिन्नेव हि पदे तदागमे हि तद्दृश्यत इत्यनेन न्यानेन विवेकोऽवधार्यते[12]।'**

अर्थात् प्रकृति (धातु) और प्रत्यय सदा एक निश्चित क्रम में विद्यमान पाये जाते हैं। वस्तुतः जब प्रत्यय उच्चरित होते सुनाई देतें है तब ही हमें भावना का बोध होता है। अतः यह स्वीकारना होगा कि प्रत्यय द्वारा भावना का द्योतन होता है।

**ग्रहैकत्व न्याय–**केवल एक कप प्रक्षालन का न्याय। 'अधिकरण खण्ड' जिसमें सोम चषक का संमार्जन वर्णित है। मीमांसासूत्र 3/1/13–15 तक सोमचषक संमार्जन वर्णित है। माधव के अनुसार 'एक' 'सम्पूर्ण' का प्रतिनिधित्व करता है और यह भी नियम है कि प्रत्येक प्रधान कार्य में गौण कार्य की आवृत्ति होती रहनी चाहिए। चषक प्रधान है और संमार्जन गौण, इसलिए इसकी आवृत्ति तब तक होनी चाहिए जब तक सभी चषक संमार्जित न हो जाएं।

प्रयोग– **'ग्रहमिति द्वितीयया ग्रहस्योद्देश्यतया प्रयोजनवत्तया च प्राधान्यं गम्यते। ग्रहं प्रति गुणः संमार्गः। प्रति प्रधानं च गुण आवर्तनीय इति न्यायेन यावन्तो ग्रहाः सन्ति ते संमार्जनीयाः[13]।'**

**कृत्वचिन्ता न्याय–**तन्त्रवार्तिक में इस न्याय का प्रयोग हुआ है। जिस बात का बाद में प्रतिवाद करना आशयित हो उसके सम्बन्ध में प्रथमतः प्रतिपक्ष की बात मान लेने की प्रवृत्ति ही इस न्याय का अन्तर्भाव है। इसी अर्थ में 'अभ्युपगमवाद' का प्रयोग है।

प्रयोग– **'यस्तु भाष्यकारेणोपन्यासः कृतः स कृत्वाचिन्तान्यायेनेति द्रष्टव्यम्[14]।**

**कूटकार्षाण न्याय–** कूट (जाली) द्रव्य (रुपया या सिक्का) का न्याय। श्रुति और स्मृति के सापेक्षिक महत्त्व प्रतिपादन के तर्क क्रम में कुमारिल ने कहा है कि स्मृति की कोई बात श्रुति के विपरीत हो तो जिस प्रकार जाली सिक्का की जानकारी होने पर आदमी उसका प्रयोग बन्द कर देता है उसी प्रकार श्रुति विपरीत स्मृति के निर्देशों का परित्याग कर देना चाहिए।

प्रयोग– **'यो हि कूटकार्षापणेन कंचित्कालमज्ञो लोकमध्ये व्यवहरति न तेन विवेके ज्ञानजनितव्युत्पत्तिनापि तथैव व्यवहृतव्यम्[15]।'**

**कुशकाशावलम्बन न्याय–** सम्भरण से अनभिज्ञ व्यक्ति यदि नदी पड़कर कुश या काश का अवलम्बन करे तो यह जिस प्रकार उसके पक्ष में निष्फल होता है उसी प्रकार प्रबल युक्ति के निराकरण होने पर दुर्बल युक्ति का अवलम्बन करने से यह निष्फल होता है। ऐसे स्थान पर यह न्याय होता है।

प्रयोग– **'अर्थवत्वं न चेज्जातं मुख्यैर्यस्य प्रयोजनैः। तस्यानुषंगिकेष्वाश कुशकाशावलम्बिनी[16]।'**

**कम्बलनिर्णेजन न्याय–** मोटे कम्बल को पैर पर पीटकर साफ करने और साथ–साथ गंदा करने का न्याय। कम्बल को गंदगी मुक्त करने के लिए पैर पर पीटकर उसे साफ करते है। और इसी क्रम में उसे गंदा भी करता है। अर्थात् एक कार्य द्वारा दो उद्देश्यकी सिद्धि जैसे सन्दर्भ में यह न्याय होता है।

प्रयोग– **अपि च दधि उभयमर्थं कर्तु फलं साधयितुं होमं च। ननु कम्बलनिर्णेजनवदेतद् भविष्यति। निर्णेजने हि उभयं करोति। कम्बलशुद्धि पादयोश्च निर्मलताम्[17]।।**

**न च सर्वत्र तुल्यत्वं स्यात्प्रयोजककर्मणां न्याय–** किसी कार्य के लिए दूसरी क्रिया सदा समान तरह की नहीं होती।

प्रयोग– **श्लोकवार्तिक के एक श्लोक की प्रथम पंक्ति है–**

**"न च सर्वत्र तुल्यत्वं स्यात्प्रयोजककर्मणाम्। चलनेन ह्यांसि योद्धा प्रयुंक्ते छेदनं प्रति।**
**सेनापतिस्तु वाचैव भृत्यानांविनियोजकः राजा सन्निधिमात्रेण।**
**विनियुंक्ते कदाचन[18]।।"**

मीमांसा शास्त्र के दुरूह स्थलों की व्याख्या हेतु अनेक आचार्यो ने अनेकशः लौकिक न्याय का अवलम्बन किया है, किन्तु जब तक लौकिक न्याय का अर्थावबोधन नहीं होगा तब तक आचार्य कथमपि अपने उद्देश्य की पूर्ति में सिद्ध नहीं हो सकेगा। अस्तु शोधपत्र में विवृणीत लौकिक न्याय के अर्थावबोधानन्तर मीमांसा शास्त्र के अवगाहन में सरलता सहजता के साथ स्पष्ट दृष्टि बनेगी।

**सन्दर्भ ग्रन्थ –**

1. माधवाचार्य (1892)न्यायमालाविस्तर (10/01/01) आनन्द आश्रम सीरीज
2. शाबरभाष्य (6/02/25)
3. शाबरभाष्य (10/03/03)
4. मिश्र पार्थसारथि न्यायरत्नमाला ( पृ० 111 )
5. माधवन्यायमालाविस्तर वही ( पृ० 221 )
6. भट्ट कुमारिल (1896) श्लोकवार्तिक ( पृ० 123 ) चौखम्भा संस्कृत सीरीज वाराणसी
7. भट्ट कुमारिल (1913) तन्त्रवार्तिक (3/5/19) चौखम्भा संस्कृत सीरीज वाराणसी
8. शास्त्रदीपिका (1/3/4)
9. तात्पर्यटीका ( पृ० 134)
10 तात्पर्यटीका ( पृ० 437)
11.जैमिनि सूत्र (1/4/5)
12. तन्त्रवार्तिक वही (पृ० 348)
13. माधवन्यायमालाविस्तर ( पृ० 308 )
14. तन्त्रवार्तिक वही (3/4/1)
15. तन्त्रवार्तिक वही (1/3/3)
16. तन्त्रवार्तिक वही (1/3/18)
17. शाबरभाष्य (2/02/25)
18. श्लोकवार्तिक वही ( पृ० 710)